भक्तिमार्ग की उत्पत्ति में ईसाइयत की भूमिका : एक भ्रांत धारणा

-डॉ. अंजनी कुमार श्रीवास्तव, सह-आचार्य, हिन्दी विभाग,
महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार

19 वीं 20 वीं शताब्दी में भारतबोध को सुनियोजित रूप से नष्ट करने का प्रयास किया गया । इसमें ईसाई मिशनरियों के साथ ही अंग्रेज प्रशासकों की भी भूमिका रही । भक्तिमार्ग भारतीय मनीषा की अद्‌वितीय उपलब्धि है, अत: इसे ईसाइयत का प्रदाय सिद्‌ध कर औपनिवेशिक हितों की पूर्ति की गयी । पाश्चात्य अध्येताओं को कृष्णोपासना और ईसाई धर्म के बीच समानता दृष्टिगत हुई जिसके आधार पर उन्होंने मध्यकालीन भक्ति काव्यधारा को ईसाइयत का प्रदाय मान लिया । ऐसा माना गया कि नेस्टोरियन धर्म प्रचारक सातवीं शताब्दी में ही भारत आ चुके थे जिनके माध्यम से ईसाई धर्म के तत्त्वों का समावेश कृष्ण की गाथाओं में हुआ ।[1] सर्वप्रथम वेबर ने 1874 में 'एन इनवेस्टिगेशन इन टु द ओरिजन ऑफ द फेस्टिवल ऑफ कृष्णजन्माष्टमी' शीर्षक निबंध में इस मत की स्थापना की कि भक्ति के तत्त्व ईसाइयत की देन हैं ।[2] इसका व्यापक स्वागत यूरोपीय विद्‌वानों द्‌वारा किया गया, लेकिन 1883 ई. में प्रकाशित मोनियर विलियम्स की पुस्तक रिलीजियस थॉट एण्ड लाइफ इन इंडिया में इस तरह की

[1] मैकनिकोल, इंडियन थीइज्म, संपादकीय, पृ.-4(उद्‌धृत), सुवीरा जायसवाल, वैष्णव धर्म का उद्‌भव और विकास, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, 1996,पृ.-2

[2] वही, पृ.-1(उद्‌धृत)

कोई धारणा प्रकट नहीं की गयी । यहाँ तक कि रामानुज के प्रसंग में उन्होंने स्पष्ट लिखा है, "It will be found, in fact, that the doctrine 'ex nihilo nihil' in some of other holds good in every religious system which India has produced independently of Christian influences."[3] हलांकि यह भक्ति के प्रसंग में नहीं कहा गया है, पर उनके द्वारा भारतीय संदर्भ में ही भक्ति की विवेचना की गयी है । चूँकि ऐतिहासिक विकासक्रम में वे हिन्दू धर्म को देखते हैं इसलिए उन्हें ईसाइयत के प्रभाव से भक्ति के उदय को देखने की जरूरत नहीं पड़ी है ।

मोनियर विलियम्स की धारणा के विपरीत 1907 में जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड में ग्रियर्सन का एक आलेख प्रकाशित हुआ 'मार्डन हिन्दुइज्म एण्ड इट्स डेट टू द नेस्टोरियन्स' । 1908 ई. में ग्रियर्सन ने 'नारायणीय एंड द भागवताज' तथा 'इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड एथिक्स' में 'भक्तिमार्ग' नामक निबंध लिखा ।[4] इन निबंधों में उनकी धारणाएँ ईसाइयत के आलोक में भक्ति को देखती हैं । युनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया की वेब लाइब्रेरी में M40965 कैटलॉग सं. से ग्रियर्सन का एक और लेख है 'Two Indian Reformers' . ऐसा लगता है कि भक्ति के उदय के प्रसंग में ईसाइयत के प्रदाय संबंधी मत को यह

[3] Monier Williams, Religious Thought and Life in India, Munshiram Manoharlal Publishers Pvt.Ltd., New Delhi,1974, p.120

[4] सुवीरा जयसवाल, वही, पृ.-2

ठीक से विवेचित करता है, क्योंकि उनके साहित्येहास ग्रंथ[5] और 'ए नोट्स ऑन तुलसीदास' में इसकी चर्चा न के बराबर है । Two Indian Reformers और Modern Hinduism and Its Debt to the Nestorians इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं कि इनमें ईसाइयत के प्रदाय से भक्ति की उत्पत्ति से संबद्ध लगभग सारी बातें आ जाती हैं ।

हालांकि अब इस मत की चर्चा कोई नहीं करता । हिन्दी साहित्य के किसी इतिहास ग्रंथ में इसकी विवेचना नहीं मिलती । बस सूचना के रूप में इसका उल्लेख कर दिया जाता है । सन् 1921 में एच.सी. राय चौधरी ने 'मैटेरियल्स ऑफ द अर्ली हिस्ट्री ऑफ वैष्णव सेक्ट' शीर्षक निबंध में इस मान्यता का जोरदार खंडन किया कि कृष्णभक्ति सम्प्रदाय ईसाइयत से प्रभावित है ।[6] लेकिन ऐसा लगता है कि एच.सी. राय चौधरी के खंडन के पहले भी ईसाइयत के प्रदाय से सम्बद्ध मत को बहुत अधिक मान्यता प्राप्त नहीं थी, क्योंकि 1913ई. के मिश्रबंधु विनोद और 1920 के एफ.ई.के. के इतिहास ग्रंथ में इसकी कोई चर्चा नहीं की गयी है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सूर-साहित्य पुस्तक में इसका उल्लेख किया है |

[5] अपने साहित्यतिहास में ग्रियर्सन ने स्पष्ट रूप से इसकी चर्चा नहीं की है, पर कहीं-कहीं इसकी झलक मिलती है । जैसे- ईश्वर रूप में अवध के राजकुमार राम की पूजा, पत्नीत्व की पूर्ण प्रतिमा सीता की प्रेममयी पति भक्ति और मातृत्व की मूर्ति कौशल्या स्वाभाविक ढंग से क्रिश्चियन चर्च की उपासना पद्धति के सर्वोत्तम रूप में विकसित हो गये हैं ।
- ग्रियर्सन, हिन्दुस्तान का आधुनिक भाषा साहित्य(अनुवाद-किशोरीलाल गुप्त) हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणसी, 1957, पृ.-50

[6] वही, पृ.-3

'मॉडर्न हिन्दुइज्म एण्ड इट्स डेट टू द नेस्टोरियन्स' के प्रारंभ में ग्रियर्सन ने अपने मत की स्थापना के लिए पृष्ठभूमि तैयार करते हुए हिन्दू धर्म की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता का उल्लेख किया है, "हिन्दू एक धर्म है जो अपने सम्पर्क में आनेवाले किसी भी वस्तु को अपने में समाहित कर सकता है । वर्तमान हिन्दू धर्म को मुश्किल से ही वेदों के प्रकृति पूजक के रूप में पहचाना जा सकता है । दूसरी ओर वैसे उदाहरण हैं कि उन्होंने मुसलमानों से एकेश्वरवाद की धारणा ग्रहण की है तथा अल्लाह उपनिषद् को हिन्दू धर्मग्रंथ के कभी न पूर्ण होने वाले कैनन में सम्मिलित कर लिया है।"[7] इसके बाद उन्होंने सीरिया के नेस्टोरियन ईसाइयों से दक्षिण भारत का सम्पर्क स्थापित किया है । उनका मानना है कि 660ई. में नेस्टोरियन ईसाइयों में नियमित रूप से चर्च-संस्कार भी नहीं थे और 14वीं शती तक तो उन्होंने बपतिस्मा का अनुष्ठान भी छोड़ दिया था ।[8] इस तरह उनका स्पष्ट निष्कर्ष है "अगर ईसाइयों का हिन्दूकरण हुआ तो निश्चय ही हिन्दुओं का ईसाईकरण हुआ।"[9] आगे कृष्ण के क्रिस्ट उच्चारण(भारत के कुछ भागों में) के जरिये उन्होंने वेबर की क्राइस्ट से कृष्ण में रूपान्तरण की धारणा से सहमति व्यक्त की है ।[10] चूँकि नेस्टोरियन ईसाइयों का सेंट थॉमस चर्च माइलापुर में है जो काँचीपुरम से कुछ ही मील की दूरी पर है(जहाँ रामानुजाचार्य ने अध्ययन किया) इसलिए उन पर

[7] George A Grierson, Modern Hinduism and Its Debt to the Nestorians, Journal of the Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland(April1907).P-311
[8] Ibid,p.312
[9] Ibid,p.313
[10] Ibid,p.314

ईसाइयत का प्रभाव पड़ा ।[11] वेबर के क्राइस्ट से कृष्ण में रूपान्तरण की धारणा को जैकोबी ने सप्रमाण खंडन कर दिया है ।[12] रामानुज के प्रसंग में प्रथम अध्याय में ही कहा जा चुका है कि उन पर दक्षिण भारत के अलवार संतों का असर है इसलिए उनके शिष्यों ने रामानुज को समझने के लिए उतने ग्रंथ नहीं लिखे जितने कि दिव्य प्रबंध को समझने के लिए । अतः केवल स्थान साम्य के आधार पर रामानुज को चर्च से प्रभावित नहीं माना जा सकता ।

Two Indian Reformers में ग्रियर्सन ने कबीर और तुलसी पर ईसाइयत के प्रभाव का विवेचन किया है । उनके अनुसार The doctrine of Bhakti required an incarnate personal god, and the Hindus, who borrowed the idea from Christianity but not the deity to whom, faith was directed, utilized for this purpose two of the incarnations of Vishnu, Rama and Krishna. There thus arose two great sects of bhakti followers, each one primarily devoted to one or other of these two gods.[13](अर्थात भक्तिमत के लिए एक मानवीय व्यक्तित्व से सम्पन्न ईश्वर की आवश्यकता हुई । हिन्दुओं ने इसे ईसाइयों से विचार के स्तर पर ग्रहण किया, लेकिन उसके ईश्वर को स्वीकार नहीं किया जिसके प्रति आस्था निवेदित थी । इसके लिए उन्होंने विष्णु के दो अवतार माने राम और कृष्ण । इस प्रकार भक्ति के मार्ग पर

[11] Ibid,p.315
[12] हजारी प्रसाद द्विवेदी, सूर-साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1989, पृ.-24
[13] Grierson, G.A, Two Indian Reformers, Web Library, University of California(M40965)

चलनेवालों के दो सम्प्रदाय निर्मित हुए । प्रत्येक सम्प्रदाय प्राथमिक रूप से राम या कृष्ण के प्रति समर्पित था ।) ग्रियर्सन की यह धारणा कि हिन्दुओं ने व्यक्तित्व सम्पन्न ईश्वर की परिकल्पना ईसाइयत के आधार पर की यह पूर्णतः गलत है । यह ठीक है कि ईसाइयत ने आगे चलकर व्यक्तित्व सम्पन्न ईश्वर की परिकल्पना कर ली । उसके पहले भी Old Testament में सुलेमान का गीत नामक एक रचना पायी जाती है जिसमें जीवात्मा का भक्ति भाव विशुद्ध मानवीय प्रेम की तरह चित्रित हुआ है । इसमें "उसे स्वयं अपने मुख से मुझे चूम लेने दो, मेरी प्रेमपात्री, मेरी सुन्दरी, उठो और चली आओ।"[14] जैसे वाक्य हैं जो व्यक्तित्व सम्पन्न ईश्वर की बात करते हैं । बावजूद इसके यह प्रमाणित नहीं होता कि ईसाइयत से हिन्दुओं ने इसे ग्रहण किया है । वैदिक साहित्य से ही व्यक्तित्व संपन्न ईश्वर की परिकल्पना मिलती है । डॉ. वेणीप्रसाद लिखते हैं "ऋग्वेद में मनुष्य और देवताओं का जैसा संबंध है वैसा आगे के हिन्दू साहित्य में नहीं है । यहाँ देवता मनुष्य जीवन से दूर नहीं हैं । आर्यों का विश्वास है कि देवता उनकी सहायता करते हैं । उनके शत्रुओं का नाश करते हैं । वे मनुष्य से प्रेम करते हैं और प्रेम चाहते हैं । भारतीय भक्ति सम्प्रदाय का आदि-स्रोत ऋग्वेद है । यहाँ कुछ मंत्रों में आदमी और देवता के बीज में गाढ़े प्रेम और मित्रता की कल्पना की गयी है।"[15] हलांकि यह ग्रियर्सन ने भी स्वीकार किया था कि व्यक्तित्व संपन्न ईश्वर की धारणा

[14] परशुराम चतुर्वेदी, भक्ति साहित्य में मधुरोपासना, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, सं.2018 वि.पृ.-18
[15] वेणी प्रसाद, हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता, पृ.-42(उद्धृत), नन्ददुलारे वाजपेयी, महाकवि सूरदास, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली,2003,पृ.23-24

हिन्दुओं में पायी जाती है । लेकिन उनका मानना था कि उस दौर में देवता व्यक्तित्वसंपन्न नहीं माने जा रहे थे । लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं है । शंकराचार्य आदि में भी व्यक्तित्व संपन्न ईश्वर का पूर्णतः नकार नहीं है । देवी भक्ति से संबद्ध पद शंकारचार्य ने भी लिखे हैं । मूर्तिपूजा भारत में चल रही थी । ऐसे में यह कहना असंगत है कि देवता व्यक्तित्व संपन्न नहीं माने जा रहे थे ।[16]

ग्रियर्सन ने कबीरपंथियों द्वारा एक पाँत में खाने की प्रथा को भी ईसाइयत से गृहीत माना है । उनके अनुसार "Another peculiarly Chirstian idea adopted by the Kabir Panthis is the sacramental meal. Whether this was instituted by Kabir himself or was subsequently imitated from the Jesuit Missionaries at the Agra Court it is impossible to say to me, the fact of the independent love-feast after the rite, seems to make it most probable the Kabir himself got it from the Nestorian".[17](अर्थात दूसरा विशिष्ट ईसाई विचार जो कबीरपंथियों द्वारा स्वीकृत हुआ वह है बपतिस्मा भोज(सहभोजन) । या तो यह कबीर द्वारा स्वयं शुरू किया या आगरा के जेसुइट मिशनरियों के अनुकरण पर किया गया कहना असंभव है । मुझे अधिक संभव यह लगता है कि धर्म-अनुष्ठान के बाद का प्रीतिभोज उन्होंने (कबीर) स्वयं नेस्टोरियन ईसाइयों से ग्रहण किया है) । ग्रियर्सन की यह धारणा भी निराधार है । संध्या-वंदन के बाद समूह में रहने वाले साधु भोजन किया करते थे । पुराणों में भी

[16] George A. Grierson, Modern Hinduism and Its Debt to the Nestorians p.313
[17] Ibid, p.8

सहभोज की कथाएँ आती हैं । कबीर की शब्द साधना को भी ग्रियर्सन ने सेंट जॉन्स के गॉस्पेल की नकल बताया है ।[18] लेकिन कीथ ने माना है कि यह वैदिक सिद्धांत है और ग्रीस में ईसा के सैकड़ों वर्ष पहले से लेकर सैकड़ों वर्ष बाद तक प्रचलित था ।[19]

तुलसीदास के प्रसंग में ईसाइयत से सम्बद्ध दो धारणाओं की चर्चा ग्रियर्सन करते हैं- पहली जन्मना पापी होने की धारणा और दूसरी एक सर्वोच्च देवता के आनुषंगिक कम शक्तिशाली देवों की कल्पना । ग्रियर्सन कहते हैं "He(Tulsidas) Accepted all the ordinary Hindu theology, with its entire mythological machinery. But to him, all these were so many accidents besides the great truths, borrowed from Nestorian Christianity, on which he laid stress viz. That there is one Supreme Being. That man is by nature infinitely sinful and unworthy of Salvation. That nevertheless, the Supreme Being, in his infinite mercy, became incarnate in the person of Rama to relieve the world of sin".[20](अर्थात तुलसीदास ने हिन्दू धर्मसाधना को समग्रता में ग्रहण किया, लेकिन इनके अतिरिक्त कई महान सत्य उन्होंने ईसाइयों से ग्रहण किये । इस पर उन्होंने जोर भी दिया । जैसे-एक सर्वशक्तिमान ईश्वर की परिकल्पना और मनुष्य के जन्मना पापी होने का सिद्धांत । सर्वशक्तिमान ईश्वर अपनी अनन्त दया के कारण राम के रूप में

[18] Ibid,p.22

[19] हजारीप्रसाद द्विवेदी, वही, पृ.-30

[20] Grierson, G.A., Modern Hinduism and Its Debt to the Nestorians p.12

संसार को पापमुक्त करने के लिए अवतार ग्रहण करता है ।) वस्तुतः मनुष्य का पापबोध और उसके साथ आत्म-परिष्कार की भावना, ये दो बातें उतनी ही पुरानी हैं जितना ऋग्वेद हैं ।[21] ग्रियर्सन जिसे ईसाइयत से आगत कह रहे हैं वह महाभारत के यदा यदा हि धर्मस्य में प्राप्त होता है । जन्मना पापी होने की अवधारणा तुलसीदास में कहीं नहीं है । विनयपत्रिका के अनेक छन्दों में तुलसीदास स्वयं को पातकी, नीच आदि कहते हैं । यह आत्मभर्त्सना भक्ति की एक शैली है । तुलसी जन्मना स्वयं को नीच नहीं कहते । वे कर्म से अपने को नीच कहते हैं । भारतीय धर्मसाधना में पाप कर्मजनित होता है जन्मना नहीं । तुलसी स्वयं को नीच इसी कारण कह रहे हैं कि उन्होंने बहुत समय गवाँ दिया दूसरे कामों में । पापपुंजहारी कहते हुए भी पाप क्षमा करने की प्रार्थना नहीं करते बल्कि शरणागति की बात करते हैं । ये चीजें ईसाइयत से भिन्न हैं । राम संसार को पापमुक्त करने के लिए अवतार लेते हैं । इसका मतलब है कि वे पापियों के संहार के लिए अवतरित हुए हैं, व्यक्ति-व्यक्ति को पापमुक्त करने के लिए नहीं ।

एक सर्वोच्च ईश्वर और उसके आनुषंगिक अन्य देवताओं की परिकल्पना-इसे ग्रियर्सन रामकथा पर लागू कर ईसाइयत का असर देखते हैं । इनके अनुसार "What relationship do the other deities of Hinduism, bear to Rama in Tulsi Dasa's theology? The answer is difficult. I think that we may compare them all (Even Shiva and Parvati) to the position which Angels and Saints occupy in the

[21] रामविलास शर्मा, भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश(भाग-1), किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ.-14

Roman Catholic Church, Some of them have mighty powers, but all are subordinate to Rama. Of special interest is the position taken by Hanuman".[22] (अर्थात् हिन्दू धम्म के अन्य देवताओं का तुलसी की धर्मसाधना में राम से कैसा संबंध है, उत्तर कठिन है । लेकिन मैं सोचता हूँ कि हम उन्हें-यहाँ तक कि शिव और पार्वती की भी एंजेल्स और सेंट की स्थिति से तुलना कर सकते हैं जो रोमन कैथोलिक चर्च में दी गयी है । उनमें से कुछ शक्तिशाली हैं, लेकिन सब राम के अधीनस्थ हैं । हनुमान द्वारा प्राप्त स्थिति विशेष रूचि की है ।) ग्रियर्सन की यह धारणा भी असंगत है । हनुमान राम के सेवक हैं, लेकिन पार्वती और शिव कहीं से राम के अधीनस्थ रामचरितमानस में नहीं दिखाये गये हैं । शिव राम की पूजा करते हैं, तो राम भी शिव की पूजा करते हैं । पार्वती की वन्दना सीता करती हैं । यद्यपि राम केन्द्र में हैं, वे सर्वशक्तिमान सत्ता भी हैं, लेकिन यह देखकर एकेश्वरवादियों के ईश्वर की तरह राम को नहीं माना जा सकता । यहाँ विशिष्टाद्वैत की स्थिति है । राम ही शिव हैं शिव ही राम हैं-कई स्थलों पर ऐसा दिखता है ।

इस प्रकार ग्रियर्सन और वेबर की इस धारणा का कोई आधार नहीं है कि हिन्दू भक्ति ईसाइयत का प्रदाय है अथवा वह ईसाइयत के तत्वों को लेकर आगे चलती है । ऐसा कहना भारतीय धर्मसाधना और चिंतन परम्परा को या तो ठीक से न समझना है या औपनिवेशिक हितों के अनुरूप उसके सर्वश्रेष्ठ रूप को ईसाइयत का योगदान सिद्ध

[22] Ibid., p.12-13

कर देना है । वस्तुतः अब इस तरह के मत की चर्चा भारतीय धर्मसाधना को समझने के लिए अनावश्यक है । किन्तु, औपनिवेशिक मानस कैसे काम कर रहा था और कैसे वह भारतीय योगदान को नकार कर उसे विकृत रूप में प्रस्तुत कर रहा था; इसे समझने के लिए ऐसे मतों का अध्ययन अति आवश्यक है । इससे बहुत-सी औपनिवेशिक निर्मितियों को ध्वस्त किया जा सकता है ।